International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य का पुनरावलोकन एवं कवयित्रियों की सहभागिता

कपिल कुमार गौतम (एम.फिल. हिंदी)

साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय,

बारला, रायसेन (म.प्र.)

मो. **8267887301, 9131829723**

Email- Kapilkumargautam1@gmail.com

हिंदी साहित्येतिहास की वृहद परम्परा में मध्यकालीन साहित्य का विशिष्ट स्थान है | प्रवृत्तिगत विभेदों के आधार पर आचार्य 'रामचन्द्र शुक्ल' ने मध्ययुगीन हिंदी साहित्य को सामान्यत: दो कालखंडों में विभाजित किया है- पूर्व-मध्यकाल अर्थात 'भक्तिकाल' और उत्तर-मध्यकाल अर्थात 'रीतिकाल' | भक्ति के विपुल प्रवाह के कारण संभवत: सभी साहित्येतिहासकारों ने पूर्व-मध्यकाल को 'भक्तिकाल' कहा है | दूसरी ओर रीतिनिरूपण के आधिक्य के कारण उत्तर-मध्यकालीन साहित्य को 'रीतिकाल' के नाम से अभिहित किया जाता है | मिश्र बंधुओं ने 'उत्तर-मध्यकाल' को 'अलंकृत काल', रामकुमार वर्मा ने 'कला काल', त्रिलोचन ने 'अन्धकार काल', गणपतिचन्द्र गुप्त ने 'शास्त्रीय मुक्तक काव्य परम्परा', रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' ने 'काव्य कला काल' और विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'श्रृंगार काल' कहा है | सामान्य तौर पर किसी भी काल विशेष का नामकरण उस काल में सर्वाधिक प्रचलित प्रवृत्ति के आधार पर ही होता है | उत्तर-मध्यकालीन साहित्य को सभी प्रमुख साहित्येतिहासकारों ने शिल्प के आधार पर ही वर्गीकृत किया है | अधिकतर आलोचकों ने उत्तर-मध्यकालीन साहित्य का प्रयोजन मात्र 'कला कला के लिए' ही स्वीकार किया है |

रीतिकालीन कवियों के विशेष साहित्य सृजना कौशल के आधार पर उनका वर्गीकरण रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध एवं रीतिमुक्त कवियों के रूप में किया जाता है | किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से किए गये इस वर्गीकरण में

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

कोई भी कवयित्री अपना स्थान सुनिश्चित नहीं कर पाती है | यहाँ तक कि सम्पूर्ण उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य की सभी प्रवृत्तियों का निर्धारण भी पुरुष कवियों के साहित्य के आधार पर ही किया जाता है | इसका आशय यह बिल्कुल भी नहीं होना चाहिए कि उत्तर-मध्यकाल में कोई कवयित्री, पुरुष साहित्यकारों के समान अथवा उनसे भी उच्च कोटि का साहित्य नहीं लिख रही थी | संभवतः उनको उचित स्थान न मिल पाने का कारण यह हो सकता है कि उनकी रचनाएँ लोक में पुरुष साहित्यकारों की भांति प्रसिद्ध नहीं थी अथवा उन्हें साहित्यकार की दृष्टि से देखा ही नहीं गया | जिस किसी आलोचक ने भी उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों की चर्चा की है वो उन्हें केवल उन्हीं सांचों में ढाल कर देखता रहा जो पुरुष साहित्यकारों की रचना धर्मिता से ही सधे हुए थे | जबकि उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों का साहित्य विविध समानताओं के उपरांत भी अपना एक स्वतंत्र अस्तित्व अवश्य रखता है |

हिंदी साहित्य में मीरा के पश्चात् सीधे छायावादी कवयित्री महादेवी का नाम ही विशेष साहित्य सरोकार के लिए जाना जाता है | मीरा और महादेवी के मध्य करीब 400 वर्षों के इतिहास में उत्कृष्ट साहित्य के लिए किसी भी कवयित्री का उल्लेख हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में नहीं मिलता है | तत्कालीन भारत में विभिन्न सांस्कृतिक और सामाजिक बन्धनों के कारण स्त्री लेखिकाओं के साहित्य को वह स्थान प्राप्त नहीं हो पाया जो उनके समकालीन पुरुष साहित्यकारों को प्राप्त था | बन्धनों के कारण ही उनका साहित्य लोकप्रसिद्धि भी प्राप्त नहीं कर पाया और वो चार दिवारी तक ही सीमित रह गया |

हिंदी में पहला स्त्री काव्य संकलन- 'मृदुवाणी'(1905 ई.) को माना गया है जिसका प्रकाशन 'मुंशी देवीप्रसाद' के द्वारा कराया गया | इसमें कुल 35 कवयित्रियाँ संकलित हैं | इसके अतिरिक्त स्त्री-साहित्येतिहास की श्रृंखला में गिरिजादत्त शुक्ल तथा ब्रजभूषण द्वारा संपादित 'हिंदी काव्य कोकिलाएं'(1933 ई.) और ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल' द्वारा प्रकाशित 'स्त्री-कवि-कौमुदी'(1931 ई.) का भी

उल्लेख किया जा सकता है | इन ग्रंथों में पूर्व मध्यकाल से आधुनिक काल तक की विभिन्न कवयित्रियों का समावेश किया गया है | 'स्त्री-कवि-कौमुदी' में ज्योतिप्रसाद 'निर्मल' ने मध्यकाल की कवयित्री मीराबाई और आधुनिक काल की महादेवी वर्मा सहित कुल 40 कवयित्रियों को समाहित किया है | जिसमें ताज, शेख, खगनिया, छत्रकुंवरी बाई, प्रवीणराय, दयाबाई, सहजोबाई, कविरानी चौबे, साईं, झीमा, रत्नकुंवरि बीबी इत्यादि लगभग दो दर्जन उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों का विवरण मिलता है | जिसमें उनके जीवन एवं काव्य के विविध पक्षों पर भी विचार किया गया है |

उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य मुग़ल साम्राज्य की समृद्धि एवं वैभव के साथ-साथ उसके पतन और विनाश का भी गवाह है | इस रूप में यह काल भारतीय राजनीति का एक बहुत महत्वपूर्ण और प्रभावकारी काल रहा है | केवल पुरुष कवियों के साहित्य के आधार पर तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं साहित्यिक पक्षों का मूल्यांकन किया जाता रहा है | जबकि यह सर्वदा एक अपूर्ण दृष्टि ही हो सकती है चूँकि इस काल में कवियों के समानांतर कवयित्रियों की भी एक लम्बी परम्परा देखने को मिलती है | इस प्रकार विवेच्य काल विशेष के सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक पहलुओं को भली प्रकार से समझने के लिए तत्कालीन कवयित्रियों की चिंतन दृष्टि को समझना भी अतिआवश्यक हो जाता है | उनकी चिंतन दृष्टि के विश्लेषण के उपरांत नवीन साहित्यिक पक्षों का उद्घाटन किए बिना उत्तर-मध्यकालीन साहित्य की प्रवृत्तियों का निर्धारण संभवत: समग्र नहीं हो सकता है |

पूर्व-मध्यकालीन हिंदी साहित्य धारा, लोक के बेहद निकट से होकर गुजरने वाली भक्ति की उच्च कोटि की साहित्यिक धारा थी | उसमें अगर अलौकिक का लौकिकीकरण हुआ है तो साथ ही लोक जागरण का आधार भी तैयार हुआ है | किन्तु लोक से सम्बद्ध धारा का विकास दरबारी साहित्य के रूप में होना ही एक शोचनीय तथ्य है | उत्तर-मध्यकालीन ज्ञात कवियों में से कोई भी भक्तिकाल की उस महती धारा को

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

उसी स्वरूप में पोषित करता हुआ नहीं दिखाई देता है, जो स्वरूप वास्तव में पूर्व-मध्यकाल को 'भक्तिकाल' की संज्ञा देने पर विवश करता है | घनानंद सहित जिन कवियों ने भक्ति के पद लिखें भी हैं उनमें भगवत भक्ति विषयक भाव की अपेक्षा प्रेम की पीर अधिक परिलक्षित होती है | किन्तु फिर भी भक्ति की उस अमर धारा का प्रभाव द्विवेदीयुगीन हिंदी साहित्य तक दिखाई देता है | अब प्रश्न उठता है कि उत्तर-मध्यकालीन साहित्य में श्रृंगार और नख-शिख वर्णन के अत्यधिक प्रभाव में भी, भक्ति की यह लोक प्रचलित धारा कहाँ से प्राण उर्जा प्राप्त करती रही ? संभवतः निर्गुण धारा को सहजोबाई, दयाबाई इत्यादि, कृष्ण भक्ति धारा को ताज, सुंदर कुंवरिबाई, बीबी रत्नकुंवरि इत्यादि, राम भक्ति धारा को प्रेम सखी, प्रताप कुंवरि इत्यादि ने उत्तर-मध्यकाल में भी जीवित रखा | इन कवयित्रियों ने इस धारा को पोषित किया और आगे भी प्रेषित किया तभी भक्ति की यह धारा आधुनिक काल में भी प्रवाहित होती रही |

उत्तर-मध्यकाल को संधिकाल के रूप में भी देखा जा सकता है | इस काल में एक ओर तो आदिकाल और पूर्व-मध्यकाल से चली आ रही साहित्यिक प्रवृत्तियों का विकास हुआ | वहीं दूसरी और आधुनिक काल की प्रवृत्तियों ने भी आकार गृहण किया और आधुनिक काल की पूर्व पीठिका तैयार हुई |

विभिन्न आलोचक मानते हैं कि उत्तर-मध्यकालीन समाज दो वर्गों, निम्न तथा उच्च में विभक्त था और इन दोनों वर्गों के मध्य से ही कलाकारों एवं काश्तकारों का उदय हुआ | किन्तु स्त्री-लेखन इतिहास के महत्वपूर्ण ग्रंथ 'स्त्री-कवि-कौमुदी' में उल्लेखित कवयित्रियों में अधिकतर का सम्बन्ध सम्पन्न और राजसी वर्ग से ही था | इसलिए प्राथमिक दृष्टि में ही तत्कालीन कवियों और कवयित्रियों में सामाजिक स्तर पर विभेद स्पष्ट हो जाता है | अधिकतर पुरुष कवियों का सम्बन्ध मूलतः मध्यम वर्ग से ही था | आश्रयदाता की प्रशंसा से ही उनको यश एवं कीर्ति प्राप्त होती थी इसलिए दरबारी साहित्य लिखने के लिए ही वे सभी साहित्यकार प्रतिबद्ध थे | लाभ-लोभ की लालसा से लिखे गये उस साहित्य में तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

और ऐतिहासिक सन्दर्भों का वास्तविक स्वरूप भी स्पष्ट नहीं हो पाता है | लेकिन इसके विपरीत अधिकतर कवयित्रियों का सम्बन्ध राजदरबारों से था इसलिए उनका साहित्य किसी भी लाभ-लोभ की पूर्ति के उद्देश्य से नहीं लिखा गया | जिन कवयित्रियों का सम्बन्ध राजघरानों से भी नहीं था उन्होंने विशुद्ध भक्ति और नीति के पद लिखे | जिसमें उनके आराध्य के प्रति श्रद्धा विशेष रूप से द्रष्टव्य है | इस प्रकार रीतिकालीन साहित्य की प्रवृत्तियों के विकास के सम्बन्ध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन **"इसका कारण जनता की रूचि नहीं, आश्रयदाता राजा-महाराजाओं की रूचि थी, जिनके लिए कर्मण्यता और वीरता का जीवन बहुत कम रह गया था"**[1] प्रमाणिक नहीं रह जाता है | क्योंकि उक्त मान्यता के केंद्र में केवल पुरुष कवियों की दृष्टि समाहित है कवयित्रियों की नहीं | उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों में जिनका सम्बन्ध राजपरिवारों से था उनके काव्य का प्रमुख विषय भक्ति भावना है | उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों यथा- रसिक बिहारी, छत्रकुंवरि बाई, सुंदरकुंवरि बाई, और रत्नकुंवरि बीबी का सम्बन्ध राजपरिवार से था | इनके सम्मुख भोग-विलास के समस्त संसाधन उपलब्ध रहते थे किन्तु इन्होंने सबको त्याग कर वैराग्य का मार्ग चुना | उल्लेखित उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियाँ मीरा का अनुसरण करती जान पड़ती हैं | जिन कवयित्रियों का सम्बन्ध राजपरिवार से नहीं था अर्थात जनसामान्य से सम्बंधित कवयित्रियों के काव्य में प्राय: जीवन का आनंद मिलता है | खगनिया, साईं, झीमा, ताज, दयाबाई और सहजोबाई जैसी कवियित्रियों का सम्बन्ध आम जनमानस से था | इसलिए इनका काव्य लोक से सम्बद्ध था | खगनिया की पहेलियाँ और साईं की कुण्डलियाँ आज भी लोक में प्रचलित है |

उत्तर-मध्यकालीन कवियों के साहित्य की भाषा दरबारी भाषा थी | जिसमें क्षेत्रीय बोलियों का प्रभाव भौगोलिक विभिन्नताओं के आधार पर पड़ा | मुख्यत: इन कवियों ने काव्य भाषा के रूप में ब्रज भाषा

[1] शुक्ल, रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2014 ई., पृ.सं. 144

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

को प्राथमिकता दी | यह वह समय था जब गैर ब्रजवासी कवियों ने भी ब्रजभाषा को ही अपनी लेखनी का आधार बनाया | किन्तु कवयित्रियों में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता है | इसके दो कारण हो सकते हैं, पहला कारण ये हो सकता है कि चार दिवारी तक सीमित रहने वाली कवयित्रियों को दूर क्षेत्र की भाषा सीखने और जानने का अवसर प्राप्त नहीं हो पाया | दूसरा कारण यह हो सकता है कि कवयित्रियों की कविता आत्मानुभूति की उपज थी, इसलिए उसकी अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने अपनी ही क्षेत्रीय भाषा अथवा अभ्यस्त भाषा को ही चुना | खैर कारण जो भी रहा हो लेकिन वास्तविकता यह है कि कवयित्रियों ने लोक प्रचलित भाषा में ही काव्य लिखा | इन कवयित्रियों के काव्य से तत्कालीन क्षेत्रीय बोलियों के भी अच्छे नमूने प्राप्त हो जाते है | खगनिया की पहेली का उदाहरण देखने योग्य है-

एक नारी है बीहड़ नंगी, झटपट बन जाती है जंगी |

रकत पियासी खासी रहै, बासू केरी खागानिया कहै ||[2](तलवार)

इसी प्रकार उत्तर-मध्यकालीन अन्य कवयित्रियों ने भी अपने काव्य में लोक भाषा का प्रयोग किया है | आधुनिक हिंदी साहित्य में प्रयुक्त खड़ी बोली का आधार भी उत्तर-मध्यकालीन साहित्य में ही तैयार हुआ है | वैसे तो खड़ी बोली के प्रथम पद चिन्ह आदिकाल से प्रारंभ होते दिखाई देते हैं किन्तु भक्तिकाल में निर्गुण कवियों की मिश्रित भाषा में घुल-मिलकर सीमित होते जान पड़ते हैं | जब आलोचक खड़ी बोली के विकास में उत्तर-मध्यकाल को उदासीन मानते हैं, तब वो शायद सहजोबाई और दयाबाई सहित सभी उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों की भाषा का मूल्यांकन नहीं करते हैं | जिन्होंने शिष्ट वर्ग से होते हुए भी लोक की भाषा में काव्य लिखा | उत्तर-मध्यकाल में विशेषरूप से कवयित्रियों के माध्यम से भी खड़ी बोली

[2] निर्मल, ज्योति प्रसाद मिश्र, स्त्री-कवि-कौमुदी, हिन्दी गौरवग्रन्थमाला 46वाँ ग्रन्थ, गाँधी हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग, संस्करण 1931 ई., पृ.सं. 26

धीरे-धीरे आधुनिक काल तक पहुँचती है | इसलिए हिंदी खड़ी बोली के विकास में उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों की सहभागिता को परखना भी आवश्यक है |

उत्तर-मध्यकालीन पुरुष कवियों के काव्य में भक्ति की आड़ में श्रृंगारिकता का प्रदर्शन हुआ है | किन्तु कवयित्रियों के काव्य में भक्ति का दार्शनिक आधार देखने को मिलता है | विवेच्य काल की प्रमुख कवयित्री 'ब्रजदासी' सम्पूर्ण संसार को झूठा और मात्र ब्रह्म को सच्चा मानते हुए कहती है-

परम प्रेम परमेश्वर स्वामी, हम तिहिं ध्यान धरत हिय मानी |

यहै त्रिबिध झूठो संसारा, भांति भांति बहु बिधि निरधारा ||[3]

पूर्व-मध्यकालीन हिंदी साहित्य में सभी प्रमुख काव्य धाराओं के केंद्र में ब्रह्म है, अब चाहे वह निर्गुण निराकार हो या सगुण साकार | उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य में पुरुष कवियों के मध्य भी विभिन्न स्वरूपों में ब्रह्म विद्यमान है | किन्तु उत्तर-मध्यकालीन कुछ कवयित्रियों ने तो ब्रह्म के दोनों स्वरूपों को नकार कर केवल गुरु को ही महत्व दिया है | सहजोबाई का अग्रलिखित पद उक्त कथ्य की पुष्टि हेतु प्रयाप्त होगा-

परमेसर सूँ गुरु बड़े, गावत वेद पुरान |

सहजो हरी के मुक्ति है, गुरु के घर भगवान ||[4]

[3] निर्मल, ज्योति प्रसाद मिश्र, स्त्री-कवि-कौमुदी, हिन्दी गौरवग्रन्थमाला 46वाँ ग्रन्थ, गाँधी हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग, संस्करण 1931 ई., पृ.सं. 77
[4] निर्मल, ज्योति प्रसाद मिश्र, स्त्री-कवि-कौमुदी, हिन्दी गौरव ग्रन्थ माला 46वाँ ग्रन्थ, गाँधी हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग, संस्करण 1931 ई., पृ.सं. 108

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था ने नारी के अधिकारों को सीमित किया हुआ था | ऐसी परिस्थितियों में कवयित्रियों की स्थिति समाज में बहुत ही शोचनीय दशा में थी | इसलिए उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों ने अपने साहित्य में सामाजिक रूढ़ियों और विसंगतियों पर भी प्रहार किया | कवयित्रियों के काव्य में विरोध का स्वर नहीं है किन्तु उनके भावों की अभिव्यक्ति उनके द्वारा चुने गये विविध विषयों के माध्यम से हो जाती है | पुरुष कवियों का साहित्य कामजन्य वासनाओं की पूर्ति के आभाव में उत्पन्न हुई कुंठाओं का परिणाम था | किन्तु कवयित्रियों के काव्य से स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन नारी सामाजिक बन्धनों से मुक्ति का मार्ग खोज रही थी | वह खुले आँगन और चौबारे में भले ही अपने श्याम संग होली का आनंद नहीं ले सकती थी | किन्तु अपनी लेखनी के माध्यम से रसिक बिहारी अपने हृदय के उच्छ्वास को बाहर निकालती है-

होरी होरी कहि बोलै सब ब्रज की नारि |

नंदगाँव- बरसानो हिली मिली गावत इत उत रस की गारि ||

उड़त गुलाल अरुण भयो अंबर चलत रंग पिचकारी कि धारि |

'रसिकबिहारी' भानु-दुलारी नायक सँग खेलें खेलवारि ||[5]

उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य को केंद्र में रखकर ही आदिकालीन एवं पूर्व-मध्यकालीन हिंदी साहित्य में उपजी चिंतन दृष्टि का मूल्यांकन पूर्ण रूप में किया जा सकता है | साथ ही आधुनिक काल में प्रवाहित चिंतन धाराओं के स्त्रोत एवं कारक जानने के लिए भी उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य की समीक्षा जरूरी है | चूँकि उत्तर-मध्यकाल का संपर्क सीधे- सीधे आधुनिक काल से रहा है इसलिए आधुनिक काल की

[5] निर्मल, ज्योति प्रसाद मिश्र, स्त्री-कवि-कौमुदी, हिन्दी गौरव ग्रन्थ माला 46वाँ ग्रन्थ, गाँधी हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग, संस्करण 1931 ई., पृ.सं. 74

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

पृष्ठभूमि के बीज तत्वों को जानने के लिए भी उत्तर-मध्यकाल का अध्ययन किया जाना अनिवार्य हो जाता है | उत्तर-मध्यकाल में स्थापित मान्यताओं के केंद्र में केवल पुरुष साहित्यकार ही रहे हैं | इस प्रकार काल विशेष की प्रवृत्तियों को कवयित्रियों के साहित्य की मूल चेतना एवं दृष्टि के साथ भी समायोजित करके देखा जाना आवश्यक है | जो परम्परा में पीछे छूट गया है उसको साथ लिए बिना हिंदी साहित्य के किसी भी काल विशेष की सम्पूर्ण चिंतन दृष्टि को मूल्यांकित नहीं किया जा सकता और न ही साहित्य इतिहास को समग्रता में देखा जा सकता है | परम्परा के सहयोग से ही वर्तमान का निर्माण होता है | इस रूप में उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों के साहित्य में निहित चिंतन दृष्टि की समीक्षा महत्वपूर्ण हो जाती है | इस तथ्य पर भी विचार किए जाने की आवश्यकता है कि जिस काल में स्त्री को केवल भोग्य माना गया है, कवयित्रियों का उस काल विशेष की प्रवृत्तियों के निर्माण में क्या योगदान रहा ? उत्तर-मध्यकाल में कविता की मुख्य धारा ब्रज भाषा में प्रवाहित हो रही थी | इसलिए आधुनिक काल में उपजी खड़ी बोली की भावभूमि को समझने के लिए भी उत्तर-मध्यकाल का पुनरावलोकन आवश्यक है | ये तब अतिआवश्यक है जब साहित्य इतिहास, उत्तर-मध्यकालीन कवयित्रियों के प्रति उदासीन दिखाई देता है | निष्कर्षतः कवयित्रियों की चिंतन दृष्टि को केंद्र में रखकर उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है | जिस से कि हिंदी साहित्य इतिहास और अधिक वैज्ञानिक एवं समग्रता निहित हो सके | इस प्रकार कवयित्रियाँ उत्तर-मध्यकालीन हिंदी साहित्य की कई अन्य प्रवृत्तियों की ओर भी ध्यान आकृष्ट कराने में सहायक साबित होंगी |

सहायक ग्रंथ

स्त्री-कवि-कौमुदी :- ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'

1. मध्यकालीन हिंदी कवयित्रियाँ :- सावित्री सिन्हा

2. महिला मृदुवाणी :- मुंशी देवीप्रसाद
3. रीतिकाव्य की भूमिका :- डॉ. नगेन्द्र
4. हिन्दी काव्य की कलामयी तारिकाएँ :- व्यथित हृदय
5. हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास :- सुमन राजे
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास :- आचार्य रामचंद्र शुक्ल
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास :- सं० डॉ. नगेन्द्र
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास :- रामचन्द्र शुक्ल
9. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास :- विश्वनाथ त्रिपाठी